ISSN: 2349-4654
नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूज़िक वर्ष : 7, अंक-1, अप्रैल 2019

आचार्य बृहस्पति व उनके शोधकार्य : एक अध्ययन

रवि पाल

शोधार्थी, संगीत एवं ललित कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Paper recieved on : April 25, 2019, Return : April 26, 2019, May 04, 2019, Accepted : May 11, 2019

सार-संक्षेप

संगीतज्ञों की परम्परा में एक नाम आधुनिक काल के आचार्य बृहस्पति जी का भी है। आचार्य बृहस्पति जी उन संगीत साधकों में से एक हैं, जिन्होंने संगीत को सम्मानीय स्थान दिलाने में अपना बहुमूल्य सहयोग दिया। आधुनिक युग के चिन्तक स्व. आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति के कार्यों पर या यूँ कहें कि उनके सांगीतिक योगदान पर अध्ययन करना एक विशेष कार्य है। उन्होंने अपने जीवन में इतना अधिक कार्य किया है कि उसे इस शोध पत्र में समाहित करना गागर में सागर भरने जैसा है, फिर भी शोधार्थी उनके सांगीतिक योगदान को बताने का पूर्ण प्रयास करेगा। शोध पत्र में 'आचार्य बृहस्पति जी' के व्यक्तित्व को बताते हुए उनके द्वारा किए गए शोध कार्यों को क्रमानुसार बताने का प्रयास किया गया है। उनके द्वारा रचित ग्रंथों में वर्णित शोध कार्य एवं उनकी विशेषताओं का वर्णन करना, उनके सांगीतिक योगदान पर सूक्ष्म व विस्तृत रूप से प्रकाश डालना भी इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है। आचार्य बृहस्पति द्वारा किया गया कार्य, उनके द्वारा स्थापित सिद्धांत, शोध कार्य, गुरु-शिष्य परम्परा एवं पांडित्य द्वारा उनके प्रयासों को सिद्ध किया जाएगा। शोध-पत्र की प्राक्कल्पना में आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति जी के द्वारा संगीत जगत में किए गए उनके योगदान को बताने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र को लिखने के लिए मूलरूप से माध्यमिक स्त्रोतों को ही लेखन का माध्यम बताया गया है।

मुख्य शब्द : आचार्य बृहस्पति, रामपुर दरबार, वाग्गेयकार, भरत का संगीत सिद्धान्त, श्रुति दर्पण

शोध-पत्र

आचार्य बृहस्पति का वंशगत संबंध रामपुर दरबार के साथ रहा था। ''रामपुर दरबार में शास्त्रीय संगीत को वर्षों से प्रोत्साहन व आश्रय मिलता रहा है।''[1] रामपुर दरबार ने अनेक महान कलाकारों संगीतज्ञों एवं संगीत शास्त्रियों को जन्म दिया है। इस दरबार से संबंध रखने वाले इन विद्वानों में आचार्य बृहस्पति अंतिम वाग्गेयकार रहे। 18वीं शती के उत्तरार्ध में ही रियासत रामपुर जीर्ण मुगल दरबार से छूटे हुए विद्वानों एवं संगीत जीवियों का आश्रय बन गई थी। ''युसुफ अली खाँ जिनका राज्यकाल सन् 1855 से सन् 1864 ई. रहा, और उनके उत्तराधिकारी नवाब कल्बेअली के शासन के दौरान पं. दत्तराम जी राज पंडित थे।[2] पं. दत्तराम जी को काव्यसिद्धि के साथ वीणावादन में भी निपुणता प्राप्त थी। उन्हीं के चरण-चिन्हों का अनुसरण करने वाले इनके पुत्र पं. अयोध्या प्रसाद जी भी राज पंडित हुए। अयोध्या प्रसाद जी के पुत्र पं. गोविन्द राम जी थे। पं. गोविन्द राम जी के पुत्र पं. कैलाश चन्द्र को अपने कुल विशेष के कारण पारम्परिक गुणियों एवं संगीत मर्मज्ञों का संसर्ग बचपन से मिला। इस महान व्यक्ति ने अपना सम्पूर्ण जीवन भारतीय संगीत को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए उत्सर्ग कर दिया।

''आचार्य बृहस्पति का जन्म रियासत रामपुर में 20 जनवरी, सन् 1918 में हुआ।''[3] इनकी चार पीढ़ियाँ रामपुर में ही रह चुकी थीं। बृहस्पति जी के परदादा पं. दत्तराम जी रियासत रामपुर के राजपंडित थे। वे प्रकाण्ड विद्वान, ज्योतिषशास्त्र व गणित के ज्ञाता, सिद्ध तांत्रिक, कवि एवं संगीतज्ञ थे। वे रामपुर नरेश नवाब कल्बेअली खाँ के दरबार के एक रत्न थे। एक बार आपकी एक अद्भुत भविष्यवाणी सत्य होने पर तत्कालीन नवाब ने प्रसन्न होकर उनके लिए एक शिव-मंदिर का निर्माण करवा दिया, जिसकी पहली ईट नवाब साहब द्वारा स्वयं रखी गई थी जो शुद्ध स्वर्ण की थी। यह शिववालय आज भी रामपुर में स्थित है तथा जिस गली में यह मंदिर स्थापित है वह मंदिर वाली गली के नाम से विख्यात है, इसे दत्तराम जी का मंदिर भी कहा जाता है। यह शिवालय आज भी इस वंश की विधा एवं कीर्ति का अमर प्रतीक है। आचार्य बृहस्पति स्वयं भी शिव भक्त थे, साथ ही वह बगला देवी के भी उपासक थे।[4] 'योगतंत्र की शिक्षा आपको रामपुर के पं. शिवनारायण दीक्षित से प्राप्त हुई थी, इस प्रकार के प्रतिष्ठित राज पंडित कुल से आचार्य जी का संबंध रहा। इसी कारण रामपुर के सभी नवाबों द्वारा इनको वही राज सम्मान प्राप्त हुआ, जो इनके पूर्वजों को मिलता रहा।'[5]

आचार्य जी का जीवन बाल्यकाल से ही संघर्षमय रहा। आचार्य बृहस्पति जी जब दस वर्ष के थे तभी इनके पिता का देहान्त हो गया। पं. गोविन्दराम जी की मृत्यु के उपरांत इनको छोटी आयु में ही एक भाई एवं एक बहन के अग्रज होने का भार सम्भालना पड़ा। पिता की मृत्यु के पश्चात् इनकी माता ने बड़े साहस व धैर्य के साथ इनका लालन-पालन किया। इनकी माता का नाम नर्मदा देवी था, जो स्वयं एक धार्मिक व दृढ़ विचारों वाली स्वाभिमानी एवं विदुषी महिला थी। उन्होंने एक सुयोग्य पुत्र को जन्म देकर, उसे समुचित संस्कार व शिक्षा देकर अपने कुल की मर्यादा तथा प्रतिष्ठा को आगे बढ़ाया था।

आचार्य बृहस्पति जी, बाल्यकाल से ही सदगुरुओं के चरणों में बैठकर विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन किया तथा काव्य-कला एवं संगीत कला की साधना की। साढ़े तीन वर्ष की आयु में इनका उच्चारण पूर्णरूपेण शुद्ध था। पाँच वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते इन्हें संस्कृत के अनेक श्लोक भी कंठस्थ हो गए थे। दस वर्ष की आयु में एक संस्कृत श्लोक की रचना कर इन्होंने विद्वानों को चकित कर दिया था। चौदह वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते आपने सुन्दर काव्य रचनाएँ रच कर अपनी प्रतिभा का प्रमाण दे दिया था।

आचार्य जी की प्रारम्भिक शिक्षा दस वर्ष तक अपने पिता के चरणों में हुई। तदुपरान्त अलंकार शास्त्र की शिक्षा आचार्य जी ने महामहोपाध्याय परमेशवरानन्द शास्त्री से, न्यास की शिक्षा स्व. पंडित हरिशंकर से व्याकरण की शिक्षा पं. छेदी झा से तथा प्रारम्भिक शिक्षा पं. कन्हैयालाल शुक्ल से, राजपंडित रामचन्द्र शास्त्री से तथा पितृ चरणों से प्राप्त की। कण्ठ संगीत में आप रामपुर दरबार के स्व. मिर्जा नवाब हुसैन तथा ताल व्यवहार में इसी दरबार के मृदंग वादक स्व. पं. अयोध्या प्रसाद के शिष्य थे।[6] ''ज्ञान प्राप्ति का यह क्रम कुछ वर्षों के लिए ही विराम हुआ, जब युवा कैलाशचन्द्र को एम.डी. कॉलेज लाहौर में अध्ययन के लिए जाना पड़ा। सन् 1936 में वह कॉलेज में प्रथम स्थान ग्रहण करते हुए आचार्य की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। अपने स्वल्प अध्ययन काल में ही वह सुप्रसिद्ध पं. परमेश्वरानन्द जी के प्रिय एवं अनुग्रह प्राप्त शिष्यों में हो गए थे, उनके रामपुर लौटकर रज़ा इन्टर कॉलेज में अध्यापक होने पर फिर वही संगीत का अनवरत क्रम चलने लगा। शिक्षा प्राप्त करने के बाद इनका विवाह यथा समय साधना देवी से सन् 1942 में हुआ था।''[7]

वे बहुत-बहुत ही सौम्य और संयत व्यक्ति थे। वे आत्म-चिन्तन में निरन्तर डूबे रहते थे, परन्तु यदि उन्हें कोई किसी विषय पर छेड़ दे, उनकी प्रतिक्रिया को आमंत्रित करे अथवा चुनौती दे दे, तो फिर सत्य की प्रतिष्ठा के लिए वे कभी ने रुकने वाले बादलों की तरह बरस पड़ते थे, उनकी वक्तृता में तार्किक बिजलियाँ चमकती थी। कुछ वर्षों तक रज़ा इन्टर कॉलेज रामपुर में कार्य करने के पश्चात् अपनी प्रतिभा व कार्य क्षेत्र की सीमा बढ़ाने के लिए वह रामपुर छोड़कर बाहर निकल पड़े तथा धर्म व भारतीय संस्कृति का प्रचार करते हुए आकाशवाणी के लिए विविध प्रकार की साहित्यिक रचनाएँ करने लगे।

आचार्य जी जितने धीर, गम्भीर दिखते थे उतना ही उनका स्वभाव विनोद प्रिय था। आचार्य महोदय अपने लिए 'आचार्य' शब्द का प्रयोग अच्छा नहीं मानते थे। एक बार जब संगीत के वरिष्ठ एवं वयोवृद्ध विद्वान ने उन्हें पत्र लिखकर पते में उनके लिए आचार्य शब्द का प्रयोग किया तब उन्होंने उत्तर में लिखा—''आजकल 'आचार्य' शब्द बहुत सस्ता हो गया है, उन अर्थों में आचार्य कहलाना सम्मान की बात नहीं। यदि आचार्य का प्राचीन अर्थ लिया जाए तो मैं अत्यंत तुच्छ व्यक्ति हूँ, शारंगदेव के द्वार का मैं अकिंचन भिक्षुक हूँ, जो आचार्य पदवी के वास्तविक अधिकारी थे। सन् 1941 में दिसम्बर मास में वे कानपुर के विक्रमाजी सिंह सनातन धर्म कॉलेज में धर्माचार्य के पद पर नियुक्त थे। सन् 1960 में आपकी धर्मपत्नी साधना जी का स्वर्गवास हो गया, जिनका आचार्य जी की उपलब्धियों में महत्त्वपूर्ण योगदान था। सन् 1965 में आकाशवाणी ने बारह वर्ष का अनुबंध देकर इन्हें दिल्ली बुला लिया। आकाशवाणी में आचार्य जी संगीत, संस्कृत तथा ब्रजभाषा के सर्वोच्च परामर्शदाता के रूप में आसीन रहे। दिल्ली आने के पश्चात् आचार्य जी का पं. भोलानाथ भट्ट जी की सुयोग्य शिष्या कु. सुलोचना कालेकर जी से विवाह हो गया।

आचार्य बृहस्पति ने आचार्य की शिक्षा प्राप्त कर यह उपाधि प्राप्त की, तत्पश्चात् संस्कृत भाषा की शिक्षा उत्तीर्ण काव्य-मनीषी की उपाधियाँ भी आपको प्राप्त हुई। संगीत महामहोपाध्याय की उपाधि ने भी आपका सम्मान वर्द्धन किया। उपाधिदान के अवसर पर जगद्गुरु शंकराचार्य शारदापीठ ने बम्बई में 26 सितम्बर, सन् 1962 में आचार्य जी को 'विद्यामार्तण्ड' की उपाधि प्रदान की। राष्ट्रपति वी.वी. गिरि द्वारा आचार्य जी को संगीत नाटक अकादमी द्वारा फैलोशिप भी प्रदान की गई। आचार्य बृहस्पति बहुमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति थे। वे शोधक के साथ ही साथ गम्भीर विचारक और आलोचक भी थे।

कार्य

सन् 1955 के अक्टूबर मास में संगीत जगत को भारत के प्रमुख समाचार पत्रों ने यह महत्त्वपूर्ण एवं ऐतिहासिक समाचार दिया कि सनातन धर्म कॉलेज, कानपुर में धर्मशास्त्र एवं हिन्दी साहित्य के प्रोफेसर आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति को संगीत के ग्रंथों में कुछ ऐसे सूत्र मिले हैं, जिनके आधार पर प्राचीन संगीत को पूर्णतया स्पष्ट किया जा सकता है।[8] हमारे संगीत रत्न के लेखक लक्ष्मीनारायण गर्ग जी ने आचार्य जी के शोध कार्य पर बहुत ही सुन्दर विवरण प्रस्तुत किया है जिसके वे कहते हैं कि उनके शोध कार्य आने वाले शोधार्थीयों को नवीन प्रेरणा देंगे। गर्ग जी ने उपरोक्त विवरण में आचार्य जी के शोध कार्यों को भलीभाँति बताया है। सन् 1956 ई. के सितम्बर मास में ऑल इण्डिया रेडियों, दिल्ली द्वारा आयोजित सेमिनार में आचार्य बृहस्पति का ऐतिहासिक भाषण हुआ, जिसमें महर्षि भरत के श्रुति-मण्डल का प्रत्यक्षीकरण 'श्रुति-दर्पण' नामक एक नवाश्किृत वाद्य पर किया गया था। इसी सेमिनार में संगीत के अनेक पक्षों पर अनुसंधान की सम्भावना बताते हुए आचार्य जी ने कहा था—''प्राचीन परन्तु लुप्त ज्ञान भंडार को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न करना प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है। अनुसंधान एक

सामूहिक कार्य है, आक्षेप किया जाता है कि संगीत के संस्कृत ग्रंथ स्पष्ट नहीं है, भारतीयों का श्रुति सिद्धांत आडम्बर मात्र है और भारतीय संगीत अवैज्ञानिक है। मैं ऐसे कथनों को प्रत्येक संस्कृतज्ञ संगीत प्रेमी के लिए ही नहीं, राष्ट्र भर के लिए चुनौती मानता हूँ। आज महर्षियों के वाक्य वैज्ञानिक तर्काधारित एवं व्यवहार सिद्ध हैं, उनकी वास्तविकता को प्रभावित करना हमारा कर्त्तव्य है। यह हमारे व्यक्तिगत मानापमान का नहीं, राष्ट्रीय सम्मान का प्रश्न है।[9]

आचार्य बृहस्पति ने सन् 1955 ई. में 'संगीत-रत्नाकर' की स्वर विधि को स्पष्ट कर लिया था जिससे उसमें वर्णित जातियों और रागों को गाकर और बजाकर स्पष्ट करना सम्भव हो सका। सन् 1957 में आपने कुछ वाद्यों का निर्माण किया। अपने द्वारा 'श्रुति दर्पण' और 'बृहस्पति वीणा' वाद्यों पर भरत पद्धति से स्वरों की स्थापना करके दोनों ग्रामों और बाइस श्रुतियों का सप्रयोग प्रदर्शन बम्बई की एक सभा में किया। इसी वर्ष आचार्य जी ने षाड्जी जाति के विभिन्न रूपों का प्रदर्शन प्रयोगात्मक रूप में किया यह जाति गायन आज भी संगीत नाटक अकादमी की टेप लाइब्रेरी में सुरक्षित है। इस जाति गायन ने लोगों को आश्चर्य में डाल दिया और सन् 1958 और सन् 1959 में भारत वर्ष के प्रमुख संगीत क्षेत्रों में आचार्य जी के इस अनुसंधान की खूब प्रशंसा हुई जिसका उल्लेख 'संगीत कला विहार' पत्रिकाओं में हुआ।

सन् 1959 ई. में उनका प्रसिद्ध ग्रंथ 'भरत का संगीत सिद्धांत' प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक की भूमिका विद्या पारखी ठाकुर जयदेव सिंह द्वारा लिखी गई, जहाँ उन्होंने एक स्थान पर कहा कि, ''मूर्च्छनाओं का इतना विशद् और पांडित्यपूर्ण वर्णन अन्यत्र कहीं नहीं मिलता।''[10] इस पुस्तक में आचार्य जी ने श्रुति, ग्राम, स्वर ग्राम, तान का अर्थ, मूर्च्छना का अर्थ, जातियों के प्रस्तार व संख्या, भरत सिद्धांत में आए परिभाषिक शब्द रस सिद्धांत आदि का वर्णन किया है। लेखक ने इसकी रचना करके संगीत के विद्यार्थियों पर बहुत उपकार किया है।

आचार्य जी का 'संगीत चिन्तामणि' ग्रंथ सन् 1966 में छपा था। यह ग्रंथ विविध निबंधों का संकलन है जो कई पक्षों को लेकर लिखा गया है। इस ग्रंथ का प्रत्येक लेख महत्त्वपूर्ण है जो कि बहुत शोध कार्य के बाद और गम्भीर अध्ययन करके लिखा गया है। यह ग्रंथ दो भागों में विभाजित है जिसे संगीत प्रेस, हाथरस (उ.प्र.) द्वारा प्रकाशित किया गया। तत्पश्चात् इनका एक और ग्रंथ 'मुसलमान और भारतीय संगीत' प्रकाशित हुआ। इस ग्रंथ में उन्होंने मुगलकाल व उससे पूर्व भारत में जो भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ सम्मिलित हुई उन सभ्यताओं का हमारे भारतीय संगीत पर क्या और कैसे प्रभाव पड़ा उसका पूर्ण रूप से विवेचन किया है।

सन् 1976 ई. में आचार्य जी के दो ग्रंथ और प्रकाशित हुए। जिनमें पहला ग्रंथ था—''खुसरो, तानसेन तथा अन्य कलाकार'' तथा दूसरा ग्रंथ था—''ध्रुवपद और उसका विकास''। ''खुसरो, तानसेन तथा अन्य कलाकार'' में आचार्य जी ने मुगल काल से विष्णु नारायण भातखंडे जी के काल तक संगीत व उसमें प्रभाव, बदलाव आदि का वर्णन किया है। ''ध्रुवपद और उसका विकास'' नामक ग्रंथ बिहार राष्ट्र भाषा परिषद द्वारा प्रकाशित किया गया है। इस ग्रंथ में आचार्य जी ने ध्रुवपद विधा के उद्भव और विकास की परम्परा का महत्त्वपूर्ण एवं गम्भीर विवेचन प्रस्तुत किया है। पूरी विवेचना वैदिक ऋचाओं शास्त्रीय उक्तियों और आचार्य भरत तथा परवर्ती व्याख्याताओं के साक्ष्यभूत उद्धरणों के साथ ही ऐतिहासिक विवरणों तथा प्रमाणिक घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में उपस्थित की गई है।

सन् 1970 ई. में श्री कुन्दकुन्द भारती द्वारा आचार्य जी का एक अन्य ग्रंथ प्रकाशित हुआ 'संगीत समयसार' इस ग्रंथ में आचार्य जी ने जैनाचार्य पार्श्वदेवकृत संगीत समयसार का अथक परिश्रम से अवगाहन किया और इसका अनुवाद करते हुए पाद टिप्पणी में शोधपूर्ण संदर्भ प्रस्तुत किए है।

आचार्य जी द्वारा तीन 'नाट्यशास्त्र का अट्ठाइसवाँ अध्याय स्वराध्याय' और 'राग रहस्य प्रथम भाग' तथा 'ब्रज बल्लरी-बिलास' यह ग्रंथ 24 जनवरी, सन् 1976 ई. को संगीतानुरागियों के समक्ष आये। दुर्भाग्यवश इस समय तक आचार्य बृहस्पति जी इहलोक में नहीं रहे थे।

'राग रहस्य प्रथम भाग' में ठाठ का सिद्धांत का संक्षिप्त इतिहास, सदारंग परम्परा में रागों के शिक्षण का क्रम, राग की बढ़त के चार स्वस्थान, बंदिश गाने व याद करने का ढंग, तान तैयार करने का ढंग आदि विषयों का विवरण दिया गया है।

इसके अतिरिक्त आचार्य जी की अन्य कई कृतियाँ है जैसे मेघ का कवि, अपराजेय, मधुमास, वियोग, शृंगार, आचार्य जी द्वारा लिखित अन्य लेख व लेखमालाएँ, मासिक पत्रिका 'संगीत' में प्रकाशित होने वाले लेख आदि। आचार्य जी द्वारा अनेक लेख व लेखमालाएँ भी लिखी गई, 'प्रश्न आपके उत्तर आचार्य बृहस्पति के' नायक स्तम्भ में अनेक वर्षों तक जिज्ञासुओं की शंकाओं का समाधान किया और उनकी 'राग चिंतन' नाम की लेखमाला को अनेक पाठकों ने चाव से पढ़ा।

संगीत के शास्त्र पक्ष के अतिरिक्त क्रियात्मक पक्ष में भी आचार्य जी ने कई नए तथ्यों को सामने रखा। उन विभिन्न तथ्यों में से एक बड़े ही दिलचस्प तथ्य को बताने जा रहा हूँ कि आचार्य जी संकीर्ण रागों को किस तरह देखते थे और इससे यह भी स्पष्ट हो जाएगा कि आचार्य जी संगीत के क्रियात्मक पक्ष की जटिलताओं को कैसे सुलझाते थे। जिन रागों को नाम दो रागों के नाम से मिलकर बना होता है वे मुर्रक्केव या संकीर्ण कहलाते हैं। सरयू कालेकर ने अपनी पुस्तक रामपुर की सदारंग परम्परा व प्रतिनिधि आचार्य बृहस्पति से मुर्रक्केव रागों के संबंध में आचार्य जी के विचारों को इस प्रकार बताया है—''स्व. आचार्य बृहस्पति ने कहा है कि—अलग-अलग रंगों के रेशम की दो डोरियाँ हैं उन्हें बट दिया जाए तो दोनों रंग हर बल में बराबर दिखाई देंगे। कोई भी एक रंग दूसरे रंग को दबाएगा नहीं, यही खूबी मूर्रक्केव राग में होनी चाहिए।[11] इस विवरण से आचार्य जी की चिन्तन विधि को समझने का प्रयास किया जा सकता है कि किस प्रकार उन्होंने बड़ी सरलता पूर्वक संकीर्ण रागों को बरतना बताया है। इससे यह कहना भी क्षतिपूर्ण न होगा कि आचार्य जी ने संगीत के शास्त्र पक्ष के साथ-साथ उसके क्रियात्मक पक्ष

पर भी प्रकाश डाला व उसकी जटिलताओं को सरलता पूर्वक हल कर प्रस्तुत किया, जिससे आधुनिक संगीत साधक अत्यंत लाभान्वित हुए। कठिन, गूढ़ और जटिल विषयों को अत्यंत सरल व सुबोध विधि से समझा देना उन्हें अनायास ही आता था। संगीत के क्रियात्मक पक्ष पर लिखित पुस्तक 'राग रहस्य' आचार्य जी की अमूल्य देन है जिसमें आचार्य बृहस्पति ने सहस्त्रविध बंदिशों की रचना की जो 'अनंग रंग' मुद्रा से अंकित है। संगीत जगत में उनका अपना एक विशिष्ट स्थान है और वे देश-विदेश में एक विशिष्ट श्रद्धा के पात्र हैं।

निष्कर्ष

आचार्य बृहस्पति एक महान संगीतकार तथा वाग्गेयकार है उनका सांगीतिक ज्ञान कोश साहित्य एवं स्वरों से ओत-प्रोत है। इनका जन्म नि:संदेह संगीत की सेवा हेतु हुआ था इसीलिए अनेको कठिनाइयों एवं जीवन के जटिल संघर्षों के बावजूद आचार्य जी ने संगीत को सर्वोच्च शिखर तक पहुँचाने का हर सम्भव प्रयास किया। आचार्य बृहस्पति द्वारा किए गए कार्य, उनके द्वारा स्थापित सिद्धांत, शोध कार्य, गुरु-शिष्य परम्परा इत्यादि सांगीतिक प्रयास आज के संगीत साधकों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने अपने कड़े परिश्रम व लगन से भारतीय संगीत की आत्मा को सुरक्षित रखा जिसके लिए संगीत जगत सदैव उनका ऋणी रहेगा। आचार्य बृहस्पति जी द्वारा रचित उनके ग्रंथों की एक सूची बनाने का प्रयास किया गया है जिससे सरलता पूर्वक उनके ग्रंथों को प्राप्त कर उनसे लाभ लिया जा सकता है।

आचार्य बृहस्पति द्वारा रचित ग्रंथों की सूची तालिका

क्रम सं.	ग्रंथ का नाम	लेखक व सह लेखक	प्रकाशक	प्रकाशन वर्ष
1.	भरत की संगीत सिद्धांत (प्रथम संस्करण)	आचार्य बृहस्पति	हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश	1959
2.	संगीत चिंतामणि प्रथम संस्करण (प्रथम खण्ड)	आचार्य बृहस्पति	संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.)	1966
3.	संगीत चिंतामणि प्रथम संस्करण (द्वितीय खण्ड)	आचार्य बृहस्पति	संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.)	1966
4.	संगीत समयसार	आचार्य बृहस्पति	कुन्दकुन्द भारती	1970
5.	मुसलमान और भारतीय संगीत	आचार्य बृहस्पति	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली	1974
6.	संगीत चिंतामणि द्वितीय संस्करण	आचार्य बृहस्पति	संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.)	1976
7.	खुसरो तानसेन तथा अन्य कलाकार	आचार्य बृहस्पति व सुलोचना बृहस्पति	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली	1976
8.	ध्रुवपद और उसका विकास	आचार्य बृहस्पति	बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, बिहार	1976
9.	मेघ का कवि	आचार्य बृहस्पति	ब्यूरो पब्लिकेशन, हरियाणा	1979
10.	नाट्यशास्त्र 28वां अध्याय-स्वराध्याय	आचार्य बृहस्पति व सुलोचना बृहस्पति	बृहस्पति पब्लिकेशन, नई दिल्ली	1986
11.	राग रहस्य, प्रथम भाग	आचार्य बृहस्पति व सुलोचना बृहस्पति	बृहस्पति पब्लिकेशन, नई दिल्ली	1986
12.	ब्रज-बल्लरी-बिलास	आचार्य बृहस्पति	बृहस्पति पब्लिकेशन, नई दिल्ली	1986
13.	भरत की संगीत सिद्धांत (द्वितीय संस्करण)	आचार्य बृहस्पति	बृहस्पति पब्लिकेशन, नई दिल्ली	1989

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भातखंडे, विष्णु नारायण, भातखंडे स्मृति ग्रंथ, पृ. 506
2. कालेकर, सरयू, रामपुर की सदारंग परम्परा और प्रतिनिधि आचार्य बृहस्पति, बृहस्पति पब्लिकेशन, मुनिरका, नई दिल्ली, संस्करण 1984, पृ. 38
3. वही, पृ. 84
4. बृहस्पति, सौभाग्य वर्द्धन, भारतीय संगीत के आप्त ऋषि आचार्य बृहस्पति एक अध्ययन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. 4
5. वही, पृ. 4

6. गर्ग, लक्ष्मी नारायण, हमारे संगीत रत्न, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.), तृतीय संस्करण-1978, पृ. 23
7. कालेकर, सरयू, Opcit : पृ. 85
8. गर्ग, लक्ष्मी नारायण, Opcit : पृ. 39
9. बृहस्पति, आचार्य, भरत का संगीत सिद्धांत, बृहस्पति पब्लिकेशन, मुनिरका, नई दिल्ली, 1989, पृ. 8
10. वही, पृ. 10
11. कालेकर, सरयू, Opcit : पृ. 58
12. संगीत, काव्य संगीत अंक, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.), 1969, पृ. 60
13. संगीत, आलाप ताल अंक, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.), 1977, पृ. 78
14. संगीत, घराना अंक, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.), 1982, पृ. 148